प्रकरण दो

कालेज, विवाह और गाँधीजी का आन्दोलन

मैं गांधीजी के आन्दोलन में सन् १९२० में शामिल हुआ और मैंने अपनी पढ़ाई छोड़ दी। यद्यपि मैं बी. ए. के लिए फाइनल परीक्षा पास कर चुका था, मैंने उसे छोड़ दिया और उसमें नहीं बैठा।

—श्रील प्रभुपाद

सन् १९१४ में युद्ध आरम्भ हुआ और बहुत से भारतीयों ने अपने शासक ग्रेट ब्रिटेन की ओर से लड़ाई के लिए नाम दर्ज कराए। अभय मैदान पार्क की दौड़-पट्टी पर अंग्रेज हवाई जहाजों को उतरते हुए देखते। समाचार-पत्रों से उन्हें लड़ाई की बातें मालूम होतीं, लेकिन युद्ध का उन पर कोई सीधा प्रभाव नहीं पड़ा। सन् १९१६ में वे कालेज में दाखिल हुए।

कलकत्ता में दो लब्ध-प्रतिष्ठ कालेज थे—प्रेसीडेंसी कालेज और स्काटिश चर्च कालेज। अभय ने स्काटिश चर्च कालेज में प्रवेश लिया। यह ईसाइयों का स्कूल था, लेकिन बंगालियों में इसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी, और बहुत से वैष्णव परिवार अपने लड़कों को उसमें भेजते थे। उसके प्रोफेसर, जिनमें से अधिकतर चर्च आफ स्काटलैंड के पादरी थे, अपनी गम्भीरता और अपने चरित्र के लिए विख्यात थे और विद्यार्थी उनमें अच्छी शिक्षा प्राप्त करते थे। यह उचित और सम्मानित संस्था थी और चूँकि यह उत्तर कलकत्ता में था और हरीसन रोड से बहुत दूर नहीं थी, गौर मोहन अभय को घर पर रख सकते थे।

गौर मोहन ने बहुत पहले निश्चय कर लिया था कि वे अभय को लंदन नहीं जाने देंगे और शिक्षा के नाम में उन्हें पश्चिम के भ्रष्टाचार का सामना नहीं करने देंगे। वे अभय को श्रीमती राधारानी और भगवान् कृष्ण का सच्चा भक्त बनाना चाहते थे। फिर भी, दूसरी ओर

वे उन्हें किसी गुरु का ब्रह्मचारी शिष्य बनने के लिए भी नहीं छोड़ देना चाहते थे। ऐसे योग्य गुरु कहाँ मिलते हैं? योगियों और स्वामियों का जो उनका अनुभव था, उससे उन्हें विश्वास नहीं होता था। उनकी इच्छा थी कि उनके पुत्र में आध्यात्मिक जीवन के सभी गुण हों, तो भी वे जानते थे कि अभय को विवाह करना होगा और अपनी जीविका कमानी होगी। ऐसी परिस्थितियों में गौर मोहन जानते थे कि वे अपने पुत्र को जो सबसे बड़ी सुरक्षा प्रदान कर सकते थे, वह स्काटिश चर्च कालेज में भरती थी।

कालेज की स्थापना रेवरेंड अलेक्जेंडर डफ नाम के ईसाई मिशनरी ने की थी, जो सन् १८३० ई. में कलकत्ता आये थे। अलेक्जेंडर डफ भारतीयों में पाश्चात्य सभ्यता के अग्रगामी प्रचारक थे। सर्वप्रथम उन्होंने जनरल असेम्बली इंस्टीट्यूशन की स्थापना की। उद्देश्य था : पाश्चात्य सिद्धान्तों पर आधारित और ऊंची कक्षाओं में अंग्रेजी के माध्यम से दी जाने वाली उदार और धार्मिक शिक्षा द्वारा बाइबिल के सन्देश का प्रसार करना। बाद में, उन्होंने कालेज आफ दि चर्च आफ स्काटलैंड की स्थापना की और १९०८ में दोनों संस्थाओं को एक में मिलाकर उसका नाम स्काटिश चर्चेज कालेज रख दिया।

श्रील प्रभुपाद : *हम अपने प्रोफेसरों का सम्मान पिता की तरह करते थे। विद्यार्थियों और प्रोफेसरों के बीच सम्बन्ध बहुत अच्छा था। वाइस-चांसलर प्रोफेसर डब्लू. एस. उर्कूहार्ट बहुत ही कोमल-चित्तवाले व्यक्ति थे। हम कभी-कभी उनके साथ परिहास भी करते थे।*

प्रथम वर्ष में मैंने अंग्रेजी और संस्कृत का अध्ययन किया और दूसरे वर्ष में संस्कृत और दर्शनशास्त्र का। उसके बाद दर्शनशास्त्र और अर्थशास्त्र का। एक दूसरे प्रोफेसर जे. सी. स्क्रिमगौर थे। वे अंग्रेजी साहित्य के प्रोफेसर थे। अंग्रेजी साहित्य पढ़ाते समय वे बंकिम चन्द्र चटर्जी से समानान्तर सन्दर्भ उद्धृत करते। वे कहते, "हाँ, हाँ, तुम्हारे बंकिम बाबू भी ऐसा कहते हैं।" उन्होंने बंकिम के साहित्य का अध्ययन किया था और वह बंकिमचन्द्र चटर्जी की तुलना वाल्टर स्काट से करते थे। उन दिनों डिकेंस और सर वाल्टर स्काट अंग्रेजी साहित्य की दो बहुत बड़ी हस्तियाँ थीं। इसलिए वह हमें इन उपन्यासकारों को पढ़ाते। उनमें बहुत अच्छा साम्य था।

अभय इंगलिश सोसाइटी के सदस्य बन गये और वे अपने सहपाठियों को कीट्स, शेली और अन्य कवियों की कविताएँ सुनाते। संस्कृत सोसाइटी के सदस्य के रूप में वे गीता सुनाते और उनके कुछ सहपाठी विशेष रूप से देखते कि वे श्रीकृष्ण के सर्वव्यापक रूप का वर्णन करने वाले ग्यारहवें प्रकरण का पाठ कितने उत्साह से करते थे! वे फुटबाल भी खेलते और नाटक के अभिनय में भाग भी लेते।

अमृतलाल बोस ने, जो बंगाल में थिएटर के प्रसिद्ध आयोजक और संचालक थे,

महाप्रभु चैतन्य के जीवन पर आधारित एक नाटक के अभिनय की तैयारी अभय और उनके सहपाठियों से कराई थी। चूँकि चैतन्य-लीला सार्वजनिक थिएटर में आठ आने में देखी जा सकती थी, इसलिए बोस ने तर्क किया कि उसके शौकिया अभिनय की क्या आवश्यकता है और वे कहते थे कि : "तुम लोगों की चैतन्य लीला के अभिनय का दर्शकों पर इतना प्रभाव होना चाहिए कि उसे देखने के बाद वे पाप-कर्म करने के लिए कभी राजी न हों।"

विख्यात संचालक बोस इन बालकों को प्रशिक्षण देने में अपनी सेवा केवल इस शर्त पर दे रहे थे कि वे सार्वजनिक अभिनय तब तक नहीं करेंगे जब तक वे कह न दें कि उनका अभिनय निर्दोष है। अभय और अन्य बालक एक साल तक चैतन्य-नाटक की रिहर्सल करते रहे; अन्ततः उनके संचालक ने उन्हें सार्वजनिक अभिनय की अनुमति दे दी। अद्वैत आचार्य की भूमिका में अभिनय करते हुए अभय ने देखा कि दर्शकों में बहुत-से लोग रो रहे हैं। पहले तो, उनकी समझ में नहीं आया कि वे ऐसा क्यों कर रहे हैं, लेकिन बाद में उन्हें मालूम हुआ कि चूँकि अभिनेताओं का प्रशिक्षण बहुत अच्छी तरह हुआ था और वे सच्चे दिल से इतना अच्छा अभिनय कर रहे थे, अतः दर्शक भाव-विगलित हो गये। अभय का यह प्रथम और अन्तिम अभिनय था।

अभय के मनोविज्ञान के अध्यापक, उर्कूहार्ट ने प्रमाणित किया कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के मस्तिष्क का वजन कम होता है। उनके अर्थशास्त्र के प्रोफेसर, मार्शल के इस सिद्धान्त पर व्याख्यान देते कि पारिवारिक प्रेम आर्थिक विकास में प्रेरक होता है। संस्कृत में अभय रो और वेब की पाठ्यपुस्तक पढ़ते, जिसमें वर्णन था कि संस्कृत सभी भाषाओं की जननी है।

संस्कृत में कालिदास के *कुमारसम्भव* का अध्ययन करते हुए अभय पर कालिदास के 'धीर' शब्द की इस व्याख्या का बड़ा प्रभाव पड़ा कि धीर का अर्थ होता है "शान्त-चित्त" या "आत्मानुशासित।" कालिदास के वर्णनानुसार एक बार बहुत समय पहले भगवान् शिव गहरी साधना में लीन थे। क्योंकि देवताओं का राक्षसों से युद्ध चल रहा था, इसलिए वे शिवजी के वीर्य से उत्पन्न एक सेनापति चाहते थे। अतएव उन्होंने उनकी साधना में विघ्न डालने के लिए एक सुन्दर युवती पार्वती को भेजा। यद्यपि पार्वती ने शिव की आराधना की और उनके लिंग का स्पर्श भी किया, तथापि वे विचलित नहीं हुए। प्रलोभन के प्रति उनका प्रतिरोध, 'धीर' होने का पूर्ण दृष्टान्त था।

भारत में अंग्रेजों द्वारा संचालित अन्य स्कूलों की तरह ही, स्काटिश चर्च कालेज के सभी अध्यापकों को भी स्थानीय भाषा सीखनी पड़ती थी। एक बार प्रोफेसर उर्कूहार्ट अभय और दूसरे विद्यार्थियों के पास से गुजरे, जो मूँगफली खा रहे थे और आपस में बातें

कर रहे थे। एक विद्यार्थी ने बंगाली में प्रोफेसर उर्कूहार्ट पर व्यंग्य किया। विद्यार्थियों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि प्रो. उर्कूहार्ट व्यंग्य करने वाले की ओर तुरन्त मुड़े और उसके व्यंग्य का उत्तर बंगाली में दिया। अभय और दूसरे छात्र शरमाकर रह गये।

बाइबिल का अध्ययन अनिवार्य था। बाइबिल सोसाइटी ने हर विद्यार्थी को सुन्दर जिल्दवाली बाइबिल दे रखी थी, और हर प्रात:काल विद्यार्थियों को बाइबिल पढ़ने, प्रार्थना करने और भजन गाने के लिए एकत्र होना पड़ता था।

प्रोफेसरों में से एक ने वैदिक सम्बन्धी कर्म और आत्मा के शरीरान्तरण सिद्धान्तों की आलोचना की। न्यायालय में किसी पर अभियोग नहीं लगाया जा सकता, जब तक कि कोई गवाह न हो। इसी तरह उनका तर्क था कि यद्यपि हिन्दुओं के अनुसार जीवात्मा को पूर्वजन्म के दुष्कर्मों के कारण वर्तमान जीवन में दुख झेलना पड़ता है, पर पूर्वजन्म के दुष्कर्मों का साक्षी (गवाह) कहाँ है ? इस आलोचना से अभय अप्रसन्न हुए और वे जानते थे कि इसका खंडन कैसे हो सकता है, लेकिन एक विद्यार्थी होने के नाते वे चुप रहे। सामाजिक दृष्टि से उनका दर्जा नीचा था और एक विद्यार्थी के लिए किसी अध्यापक को चुनौती देने की गुंजाईश नहीं थी। लेकिन वे जानते थे कि कर्म के विरुद्ध प्रोफेसर का तर्क सारहीन था; वे जानते थे कि हमारे कर्म के गवाह हैं।

कुछ विद्यार्थी जो छोटे-छोटे गाँवों से आये थे, कलकत्ता की महान् नगरी को और उसमें इतने अधिक योरोपियों की उपस्थिति देखकर आश्चर्य करते और भयभीत होते थे। लेकिन अभय के लिए कलकत्ता और अंग्रेज कोई डरावनी चीज नहीं थे। अपने स्काटिश अध्यापकों के लिए उनके मन में कुछ आकर्षण भी था। यद्यपि वे उनके प्रति कुछ डर, दूरी और तनाव का मिश्रित अनुभव करते, लेकिन वे उनकी नैतिकता और विद्यार्थियों के प्रति उनके सज्जनतापूर्ण और उदार व्यवहार के प्रशंसक थे। अभय को वे कोमल-चित्त प्रतीत होते।

एक बार बंगाल का गवर्नर, जो स्काटिश था, स्काटिश चर्च कालेज आया और उसने हर कक्षा का निरीक्षण किया। कमरे बड़े थे और प्रत्येक में १५० विद्यार्थी बैठ सकते थे। अभय पहली पंक्ति में बैठे थे और उन्होंने प्रसिद्ध गवर्नर, मारक्विस आफ जेटलैंड को बहुत निकट से देखा।

स्कूल योरोपियों और भारतीयों के बीच कड़ी सामाजिक दूरी के सिद्धान्त पर चलता था। बंगाली अध्यापक भी, जो नीची जाति के माने जाते थे, योरोपीय प्रोफेसरों से भिन्न कमरे में बैठते थे। कालेज पाठ्यक्रम का एक अंग 'इंगलैड्स वर्क इन इंडिया' था जिसे एम. घोष नामक एक भारतीय ने लिखा था। पुस्तक में विस्तार से बताया गया था कि अंग्रेज शासन के पूर्व भारत किस प्रकार आदिम अवस्था में था। अभय का अर्थशास्त्र का

अध्यापक विद्यार्थियों की मंदबुद्धि से तंग आकर कभी-कभी उन पर चिल्ला उठता था। उन्हें सम्पूर्ण भारतीय राष्ट्र के प्रतिनिधियों के रूप में उन्हें सम्बोधित करता हुआ वह कहता, "तुम लोगों को स्वतंत्रता की आशा कभी नहीं करनी चाहिए। तुम शासन नहीं कर सकते! तुम केवल गधों की तरह काम कर सकते हो। बस।"

कालेज की दिनचर्या बहुत कठोर थी। अभय को अब हर प्रात:काल राधा और गोविन्द के श्रीविग्रहों के सामने घंटों समय बिताने की स्वतंत्रता नहीं थी। वह बचपन का विलास था, जब वे प्रतिदिन मल्लिकों के मन्दिर में राधा-गोविन्द के स्वर्ण-विग्रहों के सामने घंटों बिताते थे और पुजारियों को सुगंध, पुष्प, दीप और संगीत-कीर्तन से अर्चाविग्रहों की आराधना करते और भरपूर प्रसाद वितरण करते देखते थे। बच्चे के रूप में वे मन्दिर के घास के मैदान में खेला करते थे। उन्होंने लोगों को सड़क के किनारे कचौरियाँ पकाते हुए देखा था, साइकल चलाई थी या भवतरिणी के साथ पतंग उड़ाई थी। उनका जीवन हरीसन रोड स्थित उनके घर पर माँ के वार्तालाप में और पिता की कृष्ण-पूजा में केन्द्रित था। अब वे सारे दृश्य पीछे छूट गये थे।

अब उनके दिन स्काटिश चर्च कालेज के अहाते में बीतने लगे। वहाँ एक लॉन भी था। एक बगीचा था, जिसमें पक्षी थे और बरगद का एक छोटा-सा पेड़ भी था। लेकिन पूजा के स्थान पर अब वहाँ अध्ययन था। स्काटिश चर्च कालेज का वातावरण पढ़ाई-लिखाई का था, और विद्यार्थी जब नोटिस बोर्ड या मुख्य प्रवेश-द्वार के सामने इकट्ठे होते या मुख्य प्रवेश-द्वार से होकर टोलियों में अदंर या बाहर जाते, उस समय भी उनके आकस्मिक वार्तालाप का विषय प्राय:, कक्षा-कार्य या कालेज का कार्य-कलाप होता।

जब अभय अपने सहपाठियों के साथ कक्षा में किसी बेंच पर न बैठे होते, जिसके सामने लेक्चर हाल में कई डेस्कें पक्तियों में पड़ी होती थीं, या जब वे प्रोफेसरों में से—जो प्राय: योरोपीय लिबास में पादरी होते थे और स्काटिश लहजे में बोलते हुए 'ड्यूटी' जैसे शब्द को 'जूटी' कहते थे—किसी एक का व्याख्यान ध्यानपूर्वक न सुनते होते, या जब वे पाश्चात्य तर्कशास्त्र या रसायनशास्त्र या मनोविज्ञान पर व्याख्यान सुनने के लिए वास्तव में कक्षा में न होते तो उस समय वे कालेज लाइब्रेरी में पुस्तकों से घिरे किसी मेज पर बैठे गृहकार्य को पूरा करने में लगे होते, या किसी पुस्तक को पढ़ते होते या नोट लिखते होते और सिर के ऊपर चलता पंखा पुस्तक के पृष्ठों को उलटता-पलटता रहता। जब वे अपने मां-बाप, बहिनों-भाइयों के साथ घर पर होते, उस समय भी वे अपना पाठ पढ़ते होते या लेक्चर हाल में अध्यापक के सामने प्रस्तुत करने को कुछ लिखते होते। अत: उन्हें अपने कृष्ण भगवान् की उस प्रतिमा की आराधना बन्द करनी पड़ गई, जो वर्षों पूर्व

उनकी मांग पर उनके पिता ने उन्हें दी थी। अपने आराध्य अर्चाविग्रहों को उन्हें एक बक्स में बन्द कर देना पड़ा।

गौर मोहन को इस बात से कोई चिन्ता नहीं थी कि उनके प्रिय पुत्र को उसके बचपन के भक्तिपरक कार्य-कलापों के लिए अब समय नहीं मिलता। उन्हें इस बात का ध्यान रखे कि अभय अपनी आदतों में स्वच्छ बने रहें; वे पाश्चात्य विचारों के अनुगामी न बनें या अपनी संस्कृति को चुनौती न दें और स्काटिश चर्च कालेज के विद्यार्थी के रूप में अनैतिक आचरण के शिकार न हों। गौर मोहन को संतोष था कि अभय स्नातकोत्तर सफल जीवन के लिए अच्छी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। वे एक जिम्मेदार वैष्णव होंगे, वे शीघ्र विवाह करेंगे और व्यवसाय में लगेंगे।

अभय के सहपाठियों और गहरे मित्रों में एक मित्र रूपेन्द्रनाथ मित्रा थे। अभय और रूपेन साथ-साथ अध्ययन करते और बाइबिल-पाठ के समय अनिवार्य प्रार्थना करते हुए असेंबली हाल में साथ-साथ बैठते। रूपेन देखते कि यद्यपि अभय एक गम्भीर विद्यार्थी थे, तथापि वे पाश्चात्य शिक्षा के पीछे मुग्ध नहीं थे और न उनमें विद्वत्ता प्राप्त करने के लिए उच्चाकांक्षा थी। अभय रूपेन को विश्वसनीय रूप में बताते, "ये चीजें मुझे पसन्द नहीं।" कभी-कभी वे इनसे दूर हट जाने की भी बात करते। रूपेन पूछते, "तुम क्या सोच रहे हो?" और अभय अपने मन की बात उन्हें बताते। रूपेन ने पाया कि अभय हमेशा "किसी धार्मिक विषय पर या दार्शनिक-विषय पर या भगवान् की भक्ति के सम्बन्ध में सोचा करते।"

अभय ने पाश्चात्य दार्शनिकों और वैज्ञानिकों का अध्ययन किया लेकिन वे उन्हें आकृष्ट न कर सके। कुछ भी हो, वे केवल तर्क-वितर्क करने वाले थे और उनके निष्कर्ष, उस वैष्णव-दीक्षा की भक्तिपूर्ण मनोवृत्ति से मेल नहीं खाते थे, जो अभय को उनके पिता और वैदिक धर्मग्रंथों से मिली थी। पाश्चात्य ज्ञान का वैभव, जिसे अचानक प्राप्त करके कुछ लोगों में गहरे अध्ययन की भूख जगी और जिसके द्वारा अन्य, कुछ अच्छी श्रेणियाँ और व्यवसाय प्राप्त कर आगे बढ़ जाने को लालायित हो उठे, अभय के मन को स्पर्श न कर सका। निश्चय ही, उनके मन में हमेशा "किसी धार्मिक, दार्शनिक विषय में या ईश्वर की भक्ति के विचार" उठते रहते। फिर भी स्काटिश चर्च कालेज के विद्यार्थी के रूप में वे अपना समय और ध्यान पढ़ाई-लिखाई में लगाते।

कालेज में पहला साल बीतने पर एक रात अभय ने एक असाधारण स्वप्न देखा। अभय के पिता ने कृष्ण का जो अर्चाविग्रह उन्हें दिया था, वह प्रतिवाद करता हुआ प्रकट हुआ, "तुमने मुझे इस बक्स में क्यों रख दिया है? तुम्हें चाहिए कि मुझे इससे बाहर निकालो और फिर से मेरी पूजा करो।" अभय को दुख हुआ कि उनसे अर्चाविग्रह की

उपेक्षा हुई है और कालेज के कार्यों के बावजूद घर पर उन्होंने राधा और कृष्ण की पूजा फिर से आरम्भ कर दी।

• • •

अभय से एक कक्षा आगे ओजस्वी राष्ट्रवादी सुभाषचन्द्र बोस थे। वे प्रेसीडेंसी कालेज के छात्र थे, लेकिन एक अंग्रेज प्रोफेसर के विरुद्ध, जो भारतीयों को बार-बार गालियाँ दिया करता था, विद्यार्थियों की हड़ताल कराने के कारण वहाँ से निकाल दिए गये थे। स्काटिश चर्च कालेज में बोस गम्भीर छात्र सिद्ध हुए। वे फिलासफी क्लब के मंत्री थे और वाइस चांसलर उर्कूहार्ट के साथ सहयोगपूर्ण कार्य करते थे। सुभाषचन्द्र बोस और अन्य लोगों से अभय ने भारत की स्वतंत्रता के बारे में बातें सुनी। उन्होंने ऐसे नाम सुने, जो बंगाल-भर में प्रसिद्ध थे : बिपिनचन्द्र पाल, जिन्होंने आर्म्स ऐक्ट को रद्द करने के लिए आन्दोलन किया; सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, जिन्होंने १९०५ के बंग-भंग के विरुद्ध आन्दोलन करके अंग्रेजों को आश्चर्य-चकित कर दिया; लाला लाजपत राय और सर्वविख्यात मोहनदास करमचन्द गांधी।

सरकार-विरोधी आन्दोलन को रोकने में स्काटिश चर्च कालेज बड़ा कठोर था, लेकिन होम रूल के प्रति विद्यार्थियों की सहानुभूति थी। यद्यपि विद्रोह के प्रत्यक्ष लक्षण नहीं थे, पर विद्यार्थी गोपनीय ढंग से कभी कभी राष्ट्रवादी बैठकें करते थे। जब सुभाषचन्द्र बोस ने विद्यार्थियों को भारतीय-स्वतंत्रता आन्दोलन का समर्थन करने को उकसाया, तो अभय ने उनकी बात ध्यान से सुनी। आध्यात्मिकता में बोस का विश्वास, उनका उत्साह और दृढ़-निश्चय अभय को पसन्द आये। अभय की रुचि राजनीतिक कार्य-कलापों में नहीं थी, लेकिन स्वतंत्रता आन्दोलन के आदर्श उन्हें रुचिकर लगे।

बहुत से बंगाली वक्ताओं और लेखकों ने स्वराज के लिए भारत के प्रयत्न को आध्यात्मिक आन्दोलन का नाम दिया। राष्ट्रवादियों के लिए राजनीतिक मुक्ति, भौतिक बन्धन से आत्मा की मुक्ति के समान थी। अभय की रुचि भगवान् कृष्ण की भक्ति में थी, भगवान् कृष्ण थी, जो परम सत्य हैं। यह विश्वास उन्हें अपने पिताजी से मिला था और बचपन से ही उनमें घर किये हुए था। दूसरी ओर, भारतीय स्वतंत्रता अस्थायी सापेक्षिक सत्य थी। लेकिन स्वराज के कुछ नेता, यह मानते हुए भी कि वैदिक धर्म वास्तव में परम सत्य है, बलपूर्वक कहते थे कि भारतीय संस्कृति की मूल कीर्ती संसार के कल्याण हेतु तब तक उजागर नहीं होगी, जब तक वह विदेशी शासन के कलंक से मुक्त नहीं हो जाता। उनका कहना था कि विदेशी शासक भारतीय संस्कृति को कलंकित करके उसकी भर्त्सना करते हैं।

अभय को भी ऐसा ही लगता था। एम. घोष लिखित अपनी निर्धारित पाठ्यपुस्तक 'इंगलैंड्स वर्क इन इंडिया' में उन्हें पढ़ने को मिला था कि वैदिक शास्त्र अपवित्र हैं, हाल के लिखे हैं और अंग्रेज शासन और ईसाई धर्म के प्रचार के पहले भारतीय संस्कृति आध्यात्मिकता की दृष्टि से बहुत पिछड़ी हुई थी। अंग्रेजों की ओर से शास्त्रों के विरुद्ध अनेक अपमानजनक बातें कही जाती थीं—जैसे अभय के एक प्रोफेसर द्वारा कर्म-सिद्धान्त का खंडन। लेकिन यदि भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता मिल जाये, तो हर एक—केवल भारतीय ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण विश्व—भारत की उन्नत वैदिक संस्कृति से लाभान्वित हो सकता है।

स्वराज का नारा अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, सचमुच सभी विद्यार्थियों को आकृष्ट करता था; उनमें अभय भी थे। अभय की विशेष रुचि गाँधीजी में थी। गाँधीजी *भगवद्गीता* हमेशा अपने साथ रखते थे; वे भगवान् कृष्ण के पवित्र आदेशों का प्रतिदिन पाठ करते थे और कहते थे कि अन्य सभी ग्रंथों से अधिक वे गीता से मार्ग-दर्शन प्राप्त करते हैं। गांधीजी की निजी आदतें बहुत शुद्ध थीं। वे मांस-मदिरा और अवैध यौन-सम्बन्ध से दूर रहते थे। वे एक साधु जैसा सरल जीवन बिताते थे, लेकिन भीख माँगते साधुओं की अपेक्षा, जिन्हें अभय ने कई बार देखा था, उनके जीवन में अधिक ईमानदारी थी। अभय गाँधीजी के भाषणों को पढ़ते और उनके कार्य-कलापों का अनुसरण करते। उन्हें लगता कि हो सकता है गाँधीजी कार्य के क्षेत्र में आध्यात्मिकता को चरितार्थ करें। गाँधीजी ने घोषित किया कि गीता के सत्य का स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण है; जहाँ गीता न केवल पढ़ी ही जा सकती है, वरन् प्रत्येक की स्वतंत्रता के लिए कार्य भी कर सकती है और उस स्वतंत्रता का प्रतीक है स्वराज।

स्काटिश चर्च कालेज में अभय के अध्ययन काल में राष्ट्रीयता के प्रति सहानुभूति भूमिगत बनी रही। वह एक प्रतिष्ठित संस्था थी। वहाँ से उपाधि प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी को गहरा अध्ययन करना पड़ता था और तभी आगे, वह अच्छे रोजगार की आशा कर सकता था। अंग्रेज शासन के विरुद्ध और स्वतंत्रता के पक्ष में खुलकर बोलने का मतलब था, कालेज से निष्कासन का खतरा मोल लेना। बहुत विद्रोही स्वभाव के विद्यार्थी ही इस खतरे के अन्तर्गत शिक्षा और रोजगार दोनों से हाथ धोने का साहस कर सकते थे। इसलिए वे लुक-छिपकर मिलते और विद्रोही नेताओं के भाषण सुनते : "हम स्वराज चाहते हैं! हम स्वतंत्रता चाहते हैं! अपनी सरकार! अपने स्कूल!"

• • •

गौर मोहन अपने पुत्र का चिन्तापूर्वक ध्यान रखते थे। वे अभय को उन हजारों-लाखों

लोगों में से एक नहीं समझते थे, जिन्हें भारत का राजनीतिक भाग्य बदलना था, वरन् उनके लिए वे लाडले पुत्र थे। अभय का कल्याण उनके लिए सर्वाधिक चिन्ता का विषय था। जबकि संसार का घटना-चक्र इतिहास के मंच पर घूम रहा था, गौर मोहन का ध्यान अपने पुत्र के भविष्य पर केन्द्रित था—ऐसे भविष्य पर जिसकी वे आशा करते थे और जिसके लिए वे सतत प्रार्थना करते रहे थे। वे अभय को एक सच्चा वैष्णव बनाने की योजना बना रहे थे, राधारानी का एक भक्त। उन्होंने अभय को भगवान् कृष्ण की उपासना करना और पवित्र आचरण निभाना सिखाया था और उनकी शिक्षा की व्यवस्था कर दी थी। अब गौर मोहन का विचार उनका विवाह कर देने का हुआ।

वैदिक परम्परानुसार विवाह का निश्चय मां-बाप द्वारा, बहुत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए और पुत्री के रजस्वला होने के पूर्व वह सम्पन्न हो जाना चाहिए। गौर मोहन ने अपनी पहली पुत्री का विवाह नौ वर्ष की अवस्था में कर दिया था; दूसरी का बारह वर्ष की आयु में और तीसरी का ग्यारह वर्ष की आयु में। जब उनकी दूसरी पुत्री बारहवें वर्ष में चल रही थी तो रजनी ने कहा था, "मैं नदी में जाकर आत्महत्या कर लूंगी, यदि तुम उसका विवाह तुरन्त नहीं कर देते।" वैदिक परम्परा में विवाह-पूर्व प्रेमालाप नहीं था, न नव-विवाहित दम्पति को प्रारम्भ के वर्षों में साथ रहने की अनुमति थी। युवा लड़की पहले, अपने मां-बाप के घर पर पति के लिए भोजन बनाकर, उसकी सेवा करना आरम्भ करती; फिर भोजन परोसने के लिए उसके सामने आती या किसी अन्य औपचारिक वार्तालाप में भाग लेती। इस प्रकार जब दोनों शरीर से पुष्ट हो जाते तब एक दूसरे को इतने प्रिय लगने लगते कि आपस में अभिन्न बन जाते। लड़की स्वभावतः अपने पति की विश्वासभाजन रहती, क्योंकि रजस्वला होने तक उसकी किसी अन्य लड़के से संगति ही न होती।

कलकत्ता में गौर मोहन के कई मित्र थे, जिनके साथ विवाह-योग्य पुत्रियां थीं और काफी समय से वे अभय के लिए एक उपयुक्त पत्नी के विषय में विचार कर रहे थे। सावधानीपूर्वक विचार-विमर्श के बाद अन्त में उन्होंने राधारानी दत्त को चुना, जो मल्लिकों से सम्बन्धित एक सुवर्ण-वणिक परिवार की कन्या थी। राधारानी ग्यारह वर्ष की थी। उसके पिता और गौर मोहन की भेंट होने के पश्चात् दोनों परिवार विवाह पर सहमत हो गये।

यद्यपि अभय तब कालेज में तीसरे साल के विद्यार्थी थे और उनकी कोई आमदनी नहीं थी, किन्तु किसी विद्यार्थी के लिए विवाह करना असाधारण बात नहीं थी और उन्हें तत्काल आर्थिक जिम्मेदारियों का सामना नहीं करना था। अभय को पत्नी के लिए पिता का चुनाव पसन्द नहीं था—वे किसी अन्य लड़की से विवाह करना चाहते थे—किन्तु पिता

के प्रति सम्मान के कारण उन्होंने अपनी अनिच्छा को दबा दिया। अभी तो अभय अपने परिवार में रह रहे थे और उनकी पत्नी अपने परिवार में। इसलिए पत्नी के भरण-पोषण का दायित्व उन पर तुरन्त नहीं आना था। पहले उन्हें कालेज की पढ़ाई समाप्त करनी थी।

• • •

स्काटिश चर्च कालेज में चौथे वर्ष में पढ़ते हुए, अभय में डिग्री स्वीकार करने के प्रति उदासीनता उत्पन्न होने लगी। राष्ट्रीय लक्ष्य के प्रति सहानुभूति रखने के कारण अंग्रेज संस्थाओं की तुलना में उन्हें राष्ट्रीय विद्यालय और स्वायत्त-शासन प्रिय लगे। लेकिन उनके सामने अभी कोई ऐसा विकल्प था नहीं। गाँधीजी विद्यार्थियों को विदेशी संस्थाएँ छोड़ने का नारा जरूर दे रहे थे। उनका कहना था कि विदेशियों द्वारा संचालित विद्यालय विद्यार्थियों में गुलामी की मनोवृत्ति पैदा करते हैं; वे विद्यार्थियों को अँग्रेजों के हाथ की कठपुतली के सिवाय कुछ नहीं बनाते। लेकिन फिर भी, कालेज की डिग्री जीवन में रोजगार का आधार थी। अभय ने दोनों विकल्पों पर भलीभाँति विचार किया।

गौर मोहन नहीं चाहते थे कि अभय कोई ऐसा काम करें, जिसके लिए बाद में उन्हें दुख हो। उन्होंने सदा यही प्रयत्न किया था कि वे अपने पुत्र के लिए सबसे अच्छी योजना बनाएं। लेकिन अभय की अवस्था अब तेईस वर्ष की हो गई थी और अपने लिए कोई भी निर्णय उन्हें स्वयं करना था। गौर मोहन ने भविष्य के बारे में सोचा; अभय की जन्म-पत्री कहती थी कि सत्तर वर्ष की अवस्था में वे एक महान् धर्मप्रचारक होंगे। लेकिन उसे देखने के लिए गौर मोहन तब तक जीवित रहने की आशा नहीं करते थे। फिर भी जन्म-पत्री को सही मानने में उन्हें पूरा विश्वास था और वे अभय को तदनुसार तैयार करना चाहते थे। उन्होंने वैसा ही करने का प्रयत्न किया, लेकिन कृष्ण भगवान् की क्या इच्छा है, इसे जानने का कोई उपाय नहीं था। सब कुछ कृष्ण भगवान् पर निर्भर था और कृष्ण भगवान् राष्ट्रीयता, योजना और ज्योतिष के नियमों और एक ऐसे निरहंकार कपड़े के व्यापारी की इच्छाओं से परे थे जो अपने लड़के को श्रीमती राधारानी का पक्का भक्त और *श्रीमद्भागवतम्* का प्रचारक बनाना चाहते थे। यद्यपि गौर मोहन की ओर से अभय को जो कुछ वे करना चाहते उसे करने की छूट थी, किन्तु उन्होंने सावधानीपूर्वक उन्हें हमेशा उस मार्ग पर चलाना चाहा था, जिसे वे सर्वोत्तम समझते थे। अस्तु, कालेज के विषय में अभय के निर्णय में बिना दखल दिये, गौर मोहन उनके लिए अच्छे व्यवसाय की तलाश में लग गये, परिणाम चाहे जैसा भी हो।

सन् १९२० में अभय ने कालेज के चौथे साल की पढ़ाई पूरी कर ली और वे परीक्षा में बैठे। फाइनल परीक्षा के कठोर परिश्रम के बाद उन्होंने कुछ दिन का अवकाश मनाया।

अपनी चिर-संचित एक अभिलाषा की पूर्ति के लिए वे अकेले एक दिन की ट्रेन यात्रा द्वारा जगन्नाथ-पुरी पहुँचे।

श्रील प्रभुपाद : *बचपन में मैं हर दिन सोचा करता, "जगन्नाथ-पुरी कैसे पहुँचूँ" और "वृन्दावन कैसे जाऊँ।" उस समय वृन्दावन का किराया चार या पाँच रुपये था। वही जगन्नाथ-पुरी का भी था। इसलिए मैं सोचा करता "मैं कब जाऊँगा?" अवसर मिलते ही मैं पहले जगन्नाथ-पुरी गया।*

• • •

वे उस चौड़ी सड़क पर चलते रहे, जिस पर हजारों वर्षों से रथयात्रा का जुलूस निकलता था। बाजार में दुकानों पर जगन्नाथजी की लकड़ी पर कुरेदी हुई चित्रित, छोटी-छोटी मूर्तियाँ दिखाई दे रही थीं। यद्यपि यह रथयात्रा का मौसम नहीं था, यात्री स्मारिकाएँ मोल ले रहे थे और मन्दिर में वे जगन्नाथ जी का प्रसाद खरीद रहे थे। जगन्नाथ जी के मन्दिर में नित्य भात और सब्जियों के छप्पन प्रकार के व्यंजन जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा जी के श्रीविग्रहों के समक्ष पूजा में अर्पित किये जाते थे।

अभय मन्दिर में गये और उन्होंने श्रीविग्रहों को देखा। बगल के एक आसन पर महाप्रभु चैतन्य की षष्ठ-भुज प्रतिमा विराज रही थी। महाप्रभु चैतन्य एक साथ ही कृष्ण, राम और स्वयं अपने को संन्यासी महाप्रभु चैतन्य प्रदर्शित कर रहे थे। महाप्रभु चैतन्य पुरी में विख्यात थे, जहाँ अपने जीवन के अन्तिम अठारह वर्ष उन्होंने बिताए थे। उस दौरान वार्षिक रथयात्रा के अवसर पर जब हजारों भक्तों से घिरी हुई रथयात्रा की गाड़ियाँ मुख्य सड़क पर आगे बढ़तीं, महाप्रभु-चैतन्य अपने अनुगामियों के साथ हरे कृष्ण कीर्तन करते हुए भावविभोर नृत्य करते उनके साथ चलते रहते। वे नृत्य करते-करते भगवान् कृष्ण के वियोग में अपने अतिशय प्रेम के कारण भावविभोर हो, बेसुध हो जाते थे।

जुलूस के मार्ग पर चलते हुए अभय को अपने बचपन की लीलाएँ याद आईं—सड़क पर गाना और नाचना, छोटा रथ, जुलूस, मुस्कराते हुए जगन्नाथ जी, माता और पिता, राधा-गोविन्द। जैसे भी हो, बचपन में भगवान् जगन्नाथ की कीर्ति से वे उत्प्रेरित हुए थे और वह कीर्ति इन सारे वर्षों में उनके हृदय में बसी रही थी : "मैं जगन्नाथपुरी कब जाऊँगा?" बचपन से ही वे पुरी और वृन्दावन का स्वप्न देखने लगे थे। पाँच वर्ष की अवस्था से ही वे पुरी जाने की योजना बनाने लगे थे और वहाँ के लिए ट्रेनों का समय जानने में बरबस उनका मन लगने लगा था। यह सब केवल पुरी के बाजारों की सैर करने की इच्छा से प्रेरित नहीं था और भीड़ तथा शोर-गुल भरे मन्दिर में श्रीविग्रहों के एक बार के दर्शन से उन्हें संतोष नहीं हुआ। वे एक तीर्थ-यात्री के रूप में पुरी आने को विवश हुए थे और उसके

पीछे संचालक-शक्ति थी भगवान् कृष्ण के प्रति उनकी भक्ति।

इस समय राष्ट्रीय-भावना उनके जीवन पर गहरा प्रभाव डाल रही थी। हाल में ही उनका विवाह हुआ था और ग्रेजुएट बनने तथा रोजगार-धंधे के विषय में निर्णय लेने के प्रश्न उनके सामने थे। तब भी, जबकि वे मात्र एक बालक थे, वे पुरी पहुँचकर सड़कों पर अकेले घूम रहे थे—उसी पुरी में जहाँ महाप्रभु चैतन्य रह चुके थे और जहाँ कृष्ण जगन्नाथ के रूप में अब भी रहते थे।

अभय को कलकत्ता के कार्य-भार से मुक्ति अच्छी लगी। उन्हें पता नहीं था कि कृष्ण और कृष्ण के तीर्थ-स्थल के प्रति उनके हृदय में जो प्रेम का अनुभव हो रहा था, उसका उनके जीवन से तालमेल कैसे बैठेगा। वे जानते थे कि उनके लिए कृष्ण का महत्त्व अन्य किसी भी वस्तु से अधिक था—वे भगवान् थे, परम नियन्ता और प्रत्येक के आन्तरिक मार्गदर्शक थे। लेकिन कृष्ण की सेवा कितनी अपर्याप्त और दिखावटी थी। राष्ट्रवादी भाषणकर्ता भी, यद्यपि वे *गीता* अपने साथ रखते थे, कृष्ण की तुलना में राष्ट्रीयता की ओर अधिक उन्मुख होते थे। केवल जो सच्चे भक्त थे, वे ही कृष्ण के महत्त्व और आकर्षण का अनुभव करते थे—जैसे कि उनके पिताजी।

• • •

पुरी में एक अजीब घटना हो गई। गौर मोहन ने अभय को पुरी में रहने वाले एक परिचित के लिए परिचय-पत्र दिया था। अभय उनसे मिलने गये और वहाँ उनका अच्छा स्वागत हुआ। किन्तु जब अभय के सामने दोपहर का भोजन परोसा जा रहा था, तब उन्होंने खाना पकाने के एक पात्र में एक छोटा-सा टुकड़ा देखा। उन्होंने मेजबान से उसके बारे में पूछा, तो वे बोले, "ओह, यह मांस है।"

अभय के लिए यह आघात असह्य हो गया, उन्होंने कहा, "यह क्या! मैंने मांस कभी नहीं खाया है।" उन्होंने आश्चर्य के साथ अपने मेजबान को देखा और कहा, "जगन्नाथपुरी में मुझे ऐसी आशा नहीं थी।"

मेजबान ने शरमाकर कहा, "मुझे मालूम नहीं था। मैं तो समझता था कि यह सबसे अच्छा है।" अभय ने उन्हें शान्त किया, पर उन्होंने भोजन अलग रख दिया और तत्पश्चात् वहाँ कुछ नहीं खाया। उसके बाद अभय मन्दिर से केवल जगन्नाथ जी का प्रसाद ग्रहण करने लगे।

अभय पुरी में तीन-चार दिन रुके। उन्होंने पवित्र स्थानों का चक्कर लगाया और चमचमाते प्रसिद्ध समुद्र-तट को देखा, जिस पर तेज लहरें टकराती थीं। कई बार उन्होंने जगन्नाथ मन्दिर के पण्डों को पहचाना जो सिगरेट पी रहे थे और मन्दिर से सम्बन्धित

साधुओं के अन्य अशोभनीय कार्य-कलापों के बारे में भी उन्होंने सुना। ये कैसे साधू हैं, जो मच्छी के साथ जगन्नाथ जी का प्रसाद खाते हैं और सिगरेट पीते है? इस दृष्टि से उन्हें जगन्नाथपुरी से निराशा हुई।

• • •

जब अभय घर वापस आये, तो उन्होंने अपनी युवा स्त्री को रोते पाया। तब उन्होंने सुना कि स्त्री की सहेलियों ने उससे कहा था कि, "तुम्हारे पति घर वापस नहीं आयेंगे।" उन्होंने उसे समझाया कि चिन्ता न करो, इस कथन में कोई सत्य नहीं है। मैं कुछ दिनों के लिए ही गया था और अब वापस आ गया हूँ।

यद्यपि उनके विवाहित जीवन का अभी अभी आरम्भ हुआ था, लेकिन अभय को उससे संतोष नहीं था। राधारानी दत्त एक सुन्दर युवा लड़की थी, परन्तु अभय को वह पसन्द नहीं थी। वे सोचते, 'हो सकता है कि कोई दूसरी पत्नी इससे अच्छी हो, इसके अतिरिक्त एक दूसरी पत्नी।' भारत में दूसरा विवाह करना सामाजिक दृष्टि से मान्य था, इसलिए अभय ने मामले को अपने हाथ में लेने का निर्णय लिया; उन्होंने एक अन्य लड़की के मां-बाप से मिलने का आयोजन किया। लेकिन जब उनके पिता को मालूम हुआ, तो उन्होंने अभय को बुलाया और कहा, "मेरे बच्चे, तुम दूसरा विवाह करने को आतुर हो, किन्तु मैं तुम्हें सलाह दूँगा कि ऐसा न करो। यह भगवान् कृष्ण की कृपा है कि तुम्हारी वर्तमान पत्नी तुम्हें पसन्द नहीं है। इसे सौभाग्य की बात मानो। यदि तुम अपनी पत्नी और परिवार में अत्यधिक आसक्त नहीं होते, तो इससे तुम्हें भविष्य की तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति में सहायता मिलेगी।" अभय ने अपने पिता की सलाह मान ली; वे अपने पिताजी की आज्ञा का पालन करना चाहते थे और उन्हें उनका अन्तवत् दृष्टिकोण पसन्द आया। लेकिन वे विचारमग्न बने रहे, पिता की दूर-दर्शिता से कुछ संभ्रमित भी हुए और यह सोचकर उन्हें विस्मय हुआ कि भविष्य में किस प्रकार वे आध्यात्मिक जीवन में आगे बढ़ेंगे और पिता के प्रति कृतज्ञता अनुभव करेंगे कि यह सब उनके कारण है। पिता का यह विचार कि "आध्यात्मिक जीवन में भविष्य में तुम्हारी उन्नति" अभय को बहुत पसन्द आया। जो पत्नी उन्हें मिली थी, उसे उन्होंने स्वीकार कर लिया।

• • •

अभय चरण दे का नाम उन छात्रों की सूची में सम्मिलित था, जिन्होंने बी. ए. परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी और जिन्हें डिप्लोमा के लिए आमंत्रित किया गया था। पर अभय ने निर्णय कर लिया था कि उन्हें स्काटिश चर्च कालेज का डिप्लोमा नहीं चाहिए। यद्यपि एक

ग्रेजुएट के रूप में उन्हें बड़ी अच्छी रोजी मिल जायगी, लेकिन वह रोजी अंग्रेज धब्बे से धूमिल होगी। यदि गाँधीजी को सफलता मिल गई, तो भारत को शीघ्र ही अंग्रेजों से छुटकारा मिल जायेगा। अभय ने अपना निर्णय कर लिया था और जब स्नातक-दिवस आया, तो कालेज के अधिकारियों को पता चला कि अभय ने डिप्लोमा अस्वीकार कर दिया है। इस तरह अभय ने अपना प्रतिवाद दर्ज कराया और गांधीजी के नारे को स्वीकार करने का संकेत दिया।

हाल के महीनों में गांधीजी की चुनौती का स्वर और भी ऊँचा हो गया था। युद्ध के दौरान भारतीय अंग्रेज ताज के प्रति स्वामिभक्त बने रहे, इस आशा में कि इससे भारतीय स्वतंत्रता के प्रति अंग्रेजों में सहानुभूति जाग्रत होगी। लेकिन १९१९ ई. में भारत की स्वतंत्रता के आन्दोलन को दबाने के लिए रौलट एक्ट पास किया गया। गांधीजी ने तब देश में हड़ताल का नारा दिया था, ऐसे दिन का जब सारे देश में लोगों ने प्रतिवाद के रूप में काम और स्कूलों का बहिष्कार किया। यद्यपि यह अहिंसापूर्ण प्रतिवाद था, एक सप्ताह बाद अमृतसर के जलियानवाला नाम के सार्वजनिक बाग में अंग्रेज सैनिकों ने उन सैकड़ों शस्त्ररहित, निहत्थे भारतीयों को गोलियों से मौत के घाट उतार दिया, जो वहाँ शान्तिपूर्ण सभा के लिए एकत्र हुए थे। उसके बाद गांधीजी ने भारत के प्रति अंग्रेज साम्राज्य के इरादों में सारा विश्वास खो दिया। पूर्ण असहयोग का नारा देते हुए उन्होंने हर अंग्रेज वस्तु के बहिष्कार का आदेश दिया—सामान, स्कूल, न्यायालय, सैनिक उपाधियाँ आदि। और अभय अपनी डिग्री लेने से इनकार करने से गाँधीजी के स्वतंत्रता आन्दोलन से अपने को और घनिष्ठता से सम्बद्ध करने की दिशा में बढ़ रहे थे।

किन्तु उनका हृदय उसमें नहीं था। जैसे उन्होंने अपना हृदय न तो कभी कालेज की पढ़ाई को दिया था, न डिग्री प्राप्त करने को, न अपनी पत्नी को, उसी तरह एक पूरा राष्ट्रवादी होने के विषय में भी उनके मन में संकोच था। अभय का झुकाव उस ओर हो गया था, लेकिन वास्तव में वे कभी विश्वस्त नहीं थे। अब वे बिना पढ़ाई, बिना काम-धंधे के रोजी, शिक्षा या स्त्री की परवाह न करते हुए घर पर रहने लगे। एक मित्र के विवाह के अवसर पर उन्होंने कविता लिखने का प्रयास किया। वे *श्रीमद्भागवत* और गांधीजी के ताजे भाषणों को पढ़ने लगे। उनके पास कोई तात्कालिक योजना न थी।

• • •

गौर मोहन ने अभय के लिए योजनाएँ बना रखी थी और कालेज की डिग्री उन योजनाओं का एक अभिन्न अंग थी। लेकिन ऐसा लगता है कि कृष्ण के मन में अन्य योजनाएँ थीं। बेचलर आफ आर्ट्स डिग्री लेने से इनकार करने का राजनीतिक प्रतिवाद

सामाजिक कलंक की अपेक्षा सम्मान का चिह्न था, और गौर मोहन ने उसके लिए अपने लड़के की भर्त्सना नहीं की। लेकिन तब भी, अभय को कोई काम-धंधा करने की जरूरत थी। गौर मोहन अपने मित्र कार्तिक बोस के पास गये और उनसे अभय को नौकरी देने को कहा।

डॉ. कार्तिक बोस, जो गौर मोहन के घनिष्ठ मित्र थे, अभय के बचपन से उनके पारिवारिक चिकित्सक थे। वे एक विख्यात सर्जन, चिकित्सा-विशारद और रासायनिक उद्योगपति थे। कलकत्ता में 'बोसेस लैबोरेटरी' नाम से उनका अपना प्रतिष्ठान था, जहाँ वे ओषधियाँ, साबुन और औषध-उद्योग के अन्य सामान बनाते थे। डॉ. बोस देश-भर में विख्यात थे कि वे पहले भारतीय हैं, जिन्होंने ऐसी ओषधियाँ बनाईं जिन पर पहले योरोपीय फर्मों का एकाधिकार था। उन्होंने अभय को अपनी लैबोरेटरी में डिपार्टमेंट मैनेजर के रूप में रखना स्वीकार कर लिया।

यद्यपि अभय ओषधि-निर्माण-उद्योग या प्रबन्ध के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते थे, लेकिन उन्हें विश्वास था कि इन विषयों से सम्बन्धित कुछ पुस्तकें पढ़ लेने के बाद उन्हें उतनी जानकारी हो जायेगी, जितनी की आवश्यकता थी। लेकिन जब इस युवक को अचानक डिपार्टमेंट मैनेजर का पद दिया गया, तो बहुत से कार्यकर्ता असन्तुष्ट हो गये। उनमें से कुछ वयोवृद्ध थे और फर्म में चालीस वर्ष से काम कर रहे थे। उन्होंने आपस में असंतोष प्रकट किया और अन्ततः उन्होंने डॉ. बोस के सामने आपत्ति उठाई : इस युवक को मैनेजर क्यों बनाया गया? डॉ. बोस ने उत्तर दिया, "ओह, उस पद के लिए मुझे एक ऐसे आदमी की जरूरत थी, जिस पर मैं अपने लड़के की तरह विश्वास कर सकूँ। वह चालीस-चालीस हजार रुपए के चेकों पर हस्ताक्षर करता है। उस डिपार्टमेंट के हिसाब-किताब का अपना भार मैं केवल उसे सौंप सकता हूँ। उसके पिता मेरे बहुत घनिष्ठ मित्र हैं और यह नवयुवक मेरे लिए सचमुच पुत्र के समान है।"

• • •

गौर मोहन ने अनुभव किया कि वे जो कुछ कर सकते थे, उन्होंने किया। उनकी प्रार्थना थी कि विशुद्ध वैष्णव सिद्धान्त, जिन्हें उन्होंने अपने पुत्र को सिखाया है, आजीवन उसके साथ बने रहें और उसका मार्गदर्शन करते रहें। गाँधीजी और उनके स्वराज आन्दोलन के कारण अभय की कालेज की पढ़ाई भंग हो गई थी और उनका झुकाव राष्ट्रीयता की ओर अब भी था, लेकिन उसके पीछे राजनीतिक प्रेरणा उतनी नहीं थी जितनी कि आध्यात्मिक दृष्टि। इसलिए गौर मोहन को संतोष था। वे जानते थे कि वैवाहिक सम्बन्ध से अभय को प्रसन्नता नहीं थी, लेकिन अभय ने उनकी यह व्याख्या मान ली थी

कि पत्नी और परिवार के मामलों से विलगाव आध्यात्मिक उन्नति में सहायक होगा। अभय सांसारिक मामलों में अपनी जन्मजात अरुचि दिखा रहे थे। इससे भी गौर मोहन को अप्रसन्नता नहीं थी, क्योंकि उनके लिए सांसारिक कामधंधों का स्थान भगवान् कृष्ण की आराधना के बाद था। उन्हें अभय से ऐसी ही आशा थी। अब अभय को अच्छा काम मिल गया था और उनका वैवाहिक जीवन भी ठीक हो जायेगा। गौर मोहन जो कुछ कर सकते थे, वह उन्होंने कर दिया था और अन्तिम परिणाम के लिए उन्हें कृष्ण का भरोसा था।

• • •

कांग्रेस दल का नेता स्वीकार किये जाने से प्रोत्साहित होकर, गाँधीजी ने अब भारत के साथ अंग्रेज साम्राज्य के शोषण-पूर्ण कपड़े के व्यापार पर, सीधा आक्रमण आरम्भ किया। इंगलैंड भारत से सबसे सस्ती कीमत पर रूई खरीदता था, इंग्लैंड में लंकाशायर की मिलों में उससे कपड़ा बनता था और एकाधिकार के आधार पर उस कपड़े को महँगी कीमत पर लाखों भारतवासियों को बेचता था। गाँधीजी ने प्रचार किया कि भारत को अपना कपड़ा स्वयं बनाना फिर से आरम्भ करना चाहिए; इसके लिए उसे साधारण चरखे और करघे का इस्तेमाल करना चाहिए, और इस प्रकार ब्रिटेन में बने कपड़े का पूर्ण बहिष्कार करके भारत में अंग्रेज-शक्ति के आर्थिक आधार पर आक्रमण करना चाहिए। देश-भर में ट्रेन से यात्रा करके गाँधीजी ने अपने देशवासियों से बार-बार अपील की कि वे विदेशी कपड़े और पोशाक का बहिष्कार करें और भारत के निजी कुटीर-उद्योग से पैदा की हुई सादी मोटी खादी का प्रयोग करें। अंग्रेज शासन के पहले भारत में अपने कपड़े की कताई-बुनाई होती थी। गाँधीजी का तर्क था कि कुटीर-उद्योग को नष्ट करके अँग्रेज भारतवासियों को भूखमरी और निर्जीवता के मुंह में ढकेल रहे थे।

देशवासियों के सामने दृष्टान्त रखने के लिए गाँधीजी स्वयं प्रतिदिन परम्परागत चरखे पर सूत कातते थे और सादी मोटी खादी की लंगोटी पहनते और शाल ओढ़ते थे। वे सभाएँ करते और लोगों से कहते कि आगे आओ और बाहर से आये आयात कपड़ो का बहिष्कार करो। लोग वहीं के वहीं कपड़े फेंककर ढेर लगा देते और गांधीजी उनमें आग लगा देते। गांधीजी की पत्नी शिकायत करती कि खादी बहुत मोटी होती है और भोजन बनाते समय उसका पहनना कष्टदायक है। उन्होंने पूछा कि क्या भोजन बनाते समय ब्रिटेन में बना हल्का कपड़ा पहना जा सकता है। गाँधीजी ने उत्तर दिया, "हाँ, मिल का कपड़ा पहनकर खाना बनाने की तुम्हें स्वतंत्रता है, लेकिन इस तरह पकाया खाना न खाने की स्वतंत्रता का इस्तेमाल मैं भी करना चाहता हूँ।"

अभय को कुटीर-उद्योग का पक्ष उचित जँचा। वे भी उस आधुनिक औद्योगिक उन्नति

पर मुग्ध नहीं थे, जिसका प्रवेश अंग्रेजों ने भारत में कराया था। सादा जीवन, जैसाकि गाँधीजी बल देकर कहते थे, न केवल करोड़ों भारतवासियों की दीर्घकालीन राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के लिए अच्छा था, वरन् अभय के लिए वह आध्यात्मिक संस्कार के भी हित में था। अभय ने मिल में बने कपड़े त्याग दिए और वे खादी पहनने लगे। अब वे जिससे भी मिलते, चाहे वह भारतीय हो अथवा अंग्रेज, उसके लिए उनकी पोशाख उनका असल रूप प्रकट कर देती। वे क्रान्ति के समर्थक राष्ट्रवादी थे। १९२० ई. के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में खादी पहनना केवल पहनावे का दिखावा नहीं था। यह एक राजनीतिक वक्तव्य के समान था। इसका मतलब था कि खादी पहनने वाला गाँधीवादी है। ●